अन्ततः स्वतंत्र
जीने के लिए स्वतंत्र–7
बेन दे लोच

हम गलातियों 5:16–26 और रोमियों 8 देखेंगे वरन् बार–बार उनका संदर्भ देते रहेंगे। ये दो बाइबल अंश अनेक रूपों में समानान्तर हैं। पौलुस ने रोम के विश्वासियों को लिखने से पूर्व गलातिया प्रदेश की कलीसियाओं को पत्र लिखा था। अतः रोमियों की पत्री अध्याय 8 में अनेक विषय गलातियों की पत्री के सदृश्य है। अतः हम गलातियों से पढ़ेंगे।

गलातियों 5:16–26, "पर मैं कहता हूं, आत्मा के अनुसार चलो तो तुम शरीर की लालसा किसी रीति से पूरी न करोगे। क्योंकि शरीर आत्मा के विरोध में और आत्मा शरीर के विरोध में लालसा करता है, और ये एक दूसरे के विरोधी हैं, इसलिये कि जो तुम करना चाहते हो वह न करने पाओ। और यदि तुम आत्मा के चलाए चलते हो तो व्यवस्था के अधीन न रहे। शरीर के काम तो प्रगट हैं, अर्थात व्यभिचार, गन्दे काम, लुचपन, मूर्तिपूजा, टोना, बैर, झगड़ा, ईर्ष्या, क्रोध, विरोध, फूट, विधर्म, डाह, मतवालापन, लीलाक्रीड़ा और इनके जैसे और–और काम हैं, इनके विषय में मैं तुम से पहले से कह देता हूं जैसा पहले कह भी चुका हूं, कि ऐसे ऐसे काम करनेवाले परमेश्वर के राज्य के वारिस न होंगे। पर आत्मा का फल प्रेम, आनन्द, शान्ति, धीरज, कृपा, भलाई, विश्वास, नम्रता, और संयम हैं; ऐसे ऐसे कामों के विरोध में कोई भी व्यवस्था नहीं। और जो मसीह यीशु के हैं, उन्होंने शरीर को उसकी लालसाओं और अभिलाषाओं समेत क्रूस पर चढ़ा दिया है। यदि हम आत्मा के द्वारा जीवित हैं, तो आत्मा के अनुसार चलें भी। हम घमण्डी होकर न एक दूसरे को छेड़ें, और न एक दूसरे से डाह करें।"

मैं अपने पिछले अध्ययन के अन्त से आरंभ करना चाहता हूं, "मसीही स्वतंत्रता का अर्थ है–विश्वास के द्वारा, आत्मा में, आशा संपूर्ण, प्रेम का जीवन।" यह पद 15 का सारांश था। इस अध्ययन में हम पिछले बाइबल पाठ का मात्र एक भाग देखेंगे जहां गलातियों 5:16–26 में पौलुस के ध्यान का केन्द्र है।
हमने देखा था कि हमारा व्यवहार प्रेमपूर्ण हो। इस अध्ययन में आपने दो बातें सुनी थीं, "हम व्यवस्था के दासत्व से मुक्त किए गए हैं और हम प्रेम से एक दूसरे के दास हैं।"

यह गलातियों 5:13–14 है अतः हम शीघ्रता से इसे देखेंगे, "हे भाइयों तुम स्वतंत्र होने के लिए बुलाए गए हो, परन्तु ऐसा न हो कि वह स्वतंत्रता शारीरिक कामों के लिए अवसर बने, वरन् प्रेम से एक दूसरे के दास

बनो। क्योंकि सारी व्यवस्था इस एक ही बात में पूरी हो जाती है, 'तू अपने पड़ोसी से अपने समान प्रेम रख।'"

ध्यान दीजिए कि पौलुस व्यवस्था से स्वतंत्र होने की बात तो करता है परन्तु वह प्रेम के दास होने के लिए स्वतंत्र होना कहता है। यहां वह आज्ञा के संदर्भ से समझाता है कि प्रेम व्यवस्था को कैसे पूरा करता है। अतः मेरे पास पड़ोसी से अपने समान प्रेम करने की दो व्याख्याएं हैं।

हम अपने पड़ोसी से अपने समान प्रेम करें। पौलुस कहता है कि हम स्वतंत्र हैं। अर्थात हम दूसरों की भलाई उसी रूप में चाहेंगे जिस रूप में हम अपनी भलाई चाहते हैं। दूसरा, हम दूसरों की आवश्यकता का उतना ही ध्यान रखेंगे जितना हम अपनी आवश्यकताओं का ध्यान रखते हैं।

यह परिभाषा दो पक्षों को व्यक्त करती हैः पहला, मन–भलाई करने की मनोकामना या अन्यों की भलाई की इच्छा। दूसरा, करके दिखाना–वास्तव में दूसरों की आवश्यकता का ध्यान रखना। अपने पड़ोसी से अपने समान प्रेम रखने का एक उदाहरण है।

इस परिभाषा पर ध्यान देते ही हमारे सामने यह हमारी पापी प्रवृति के विरोध में उपस्थित होता है। यदि आपको इस आज्ञा–'अपने पड़ोसी से अपने समान प्रेम रख'– के बन्धन का बोध होता है तो यह स्वतंत्रता नहीं है।

सच कहूं, मैं अधिकांश समय अपने से अधिक कुछ और सोचता ही नहीं हूं– अपना परिवार, सोना, जागना, नहाना धोना, तैयार होना और बाहर निकल लेना–दिनचर्या पूरी करना।

यह गलत नहीं है। हम सब करते हैं। हम सब का यही अनुभव है। सुबह के समय तो घर में अव्यवस्था का वातावरण ही बना रहता है। मैं अपने जीवन में और अन्यों के जीवन में यही देखता हूं, स्वार्थपरायण दिनचर्या।

मुझे प्राय ई.मेल मिलते रहते हैं जिसमें हमारे लोग सहायता का निवेदन करते हैं, अपनी नहीं समाज की सेवा में सहायता। वे लिखते हैं, "बेन, क्या आप 100 या 500 मनुष्यों तक हमारी सहायता का निवेदन पहुंचा सकते हैं कि वे मेरे इस कार्य में सहायता कर पाएं?" ऐसे अनेक ई.मेल आते हैं।

मैं उनके निवेदन भेजता रहता हूं। कभी 50 जनों को तो कभी 100 को तो कभी 500 को परन्तु हमें प्रतिक्रिया देखने को नहीं मिलती है। यदाकदा ही कोई उत्तर देता है, "मैं अपना महत्त्वपूर्ण काम छोड़कर किसी की आवश्यकताओं के प्रति समर्पित होना चाहता हूं, किसी की सहायता करना चाहता हूं।"

मैं किसी पर दोष नहीं लगाता किसी को लज्जित करना नहीं चाहता हूं। मैं भी इसी वर्ग में आता हूं क्योंकि सबसे पहले तो मुझे ही वे ई.मेल मिलते हैं। परन्तु मैं स्वयं सहायता करने की अपेक्षा उन्हें आगे बढ़ा देता हूं। मैं इस बात से जो कहने का प्रयास कर रहा हूं वह यह है कि पौलुस की बात मानना कैसा अव्यावहार्य है– अपने पड़ोसी से अपने बराबर प्रेम कर–अन्यों की भलाई करना, अपने बराबर अन्यों की चिन्ता करना। यदि मसीही जीवन यह है तो यह बहुत कठिन जीवन है। यह लगभग असंभव प्रतीत होता है। ऐसे लगता है कि हम स्वतंत्र हैं ही नहीं।

पद 15 में पौलुस हमें एक उदाहरण देता है जिससे प्रकट है कि यदि हम में यह प्रेम न हो तो क्या होगा। देखिए पद 15 में वह क्या कहता है, "यदि तुम एक दूसरे को दांत से काटते और फाड़ खाते हो, तो चौकस रहो कि एक दूसरे का सत्यनाश न कर दो।"

यह तो प्रेम है ही नहीं। यह प्रेम कहलाता है क्या? पौलुस प्रेम का विपरीत परिदृश्य प्रस्तुत कर रहा है। एक दूसरे को दांत से काटना और फाड़ खाना! किसी की पीठ पीछे बुराई करना या किसी के विषय अपमानजनक बातें करना! "फाड़ खाना" का यूनानी शब्द प्रकट करता है कि किसी से कुछ इस प्रकार झपटना कि वह क्षतिग्रस्त हो जाए। ऐसे में मनुष्य एक दूसरे का नाश कर देता है। यह पौलुस के लिए एक अत्यधिक गंभीर विषय है।

गलातियों अध्याय 5 पद 26 में भी वह यही विचार प्रस्तुत करता है, "हम घमण्डी होकर न एक दूसरे को छेड़ें और न एक दूसरे से डाह करें।" वही विचार है! ऐसा व्यवहार प्रेम विरोधी है। अपने आप को दूसरों से बड़ा समझना। अहंकारी होना परस्पर कलह करना, विवाद करना, ईर्ष्या करना आदि सब बातें प्रेम विरोधी हैं। इन दोनों पदों में –15 और 26, पौलुस यही कहता है कि ऐसा व्यवहार प्रेम विरोधी है। ये पद इस संपूर्ण भाग में जिसमें पौलुस आत्मा के विषय चर्चा करता है, पुस्तक चिन्ह स्वरूप हैं।

मैं चाहता हूं कि आप पद 20 देखें जहां पौलुस पाप के व्यवहार की सूची देता है। उस सूची में यही दुर्गुण व्यक्त है–व्यभिचार, गन्दे काम, लुचपन, मूर्तिपूजा, टोना, बैर, झगड़ा, ईर्ष्या, क्रोध, विरोध, फूट, विधर्म। ये सब

बातें प्रेम विरोधी हैं। 12 पदों में तीन बार वह इस गंभीर विषय पर टिप्पणी करता है। पौलुस के लिए यह आपातकालीन स्थिति है।

पद 14, "तू अपने पड़ोसी से अपने समान प्रेम रख।" और पद 13, "प्रेम से एक दूसरे के दास बनो।" क्या पौलुस हमें यह आज्ञा देता है? क्या वह मसीह की देह में फूट के प्रति अत्यधिक चिन्तित है? क्या वह मसीह की देह में एकता चाहता है कि कहे व्यवस्था की प्रत्येक बात की अपेक्षा यह एक काम करो? क्या यह कहने के द्वारा पौलुस रुढ़ीवादी हो गया है? कदापि नहीं, वह वास्तव में समझ गया था कि आत्मा से रहित ऐसा होना संभव नहीं है। विश्वास का जीवन केवल आत्मा की सहायता से ही संभव है।

देखिए पद 5 में वह क्या कहता है, "क्योंकि आत्मा के कारण हम विश्वास से आशा की हुई धार्मिकता की बाट जोहते हैं।" अतः पौलुस इन तीन शब्दों का भेद प्रकट करता है– "आत्मा के कारण।"

आत्म के द्वारा जीवन का अर्थ क्या है? पद 16–25 में वह इसी की व्याख्या करता है। इस अध्ययन में हम आत्मा के जीवन के तीन पक्ष देखेंगे।

ये वास्तव में तीन व्याख्याएं नहीं, आत्मा के जीवन के तीन मार्ग हैं– एक ही सत्य के तीन रूप, जैसे किसी एक ही ईमारत की तीन दिशाएं जो देखने में भिन्न–भिन्न दृश्य प्रदान करती हैं। ऐसा ही इस सत्य के साथ है कि इसके परिदृश्य तीन हैं।

पहला परिदृश्य– पद 16, 17– आत्मा के जीवन का अर्थ है, आत्मा की इच्छा को प्रकट करना। संपूर्ण नये नियम में हम आत्मा के काम की अनिवार्यता पर ध्यान केन्द्रित देखते हैं और विशेष करके पौलुस के पत्रों में। पद 16 में आप देखते हैं कि एक स्पष्ट आज्ञा है, "मैं कहता हूं, आत्मा के अनुसार चलो तो तुम शरीर की लालसा किसी रीति से पूरी न करोगे।"

यहां आचरण के बारे में कहा गया है क्योंकि पुराने नियम में आप देखेंगे कि मनुष्य जब परमेश्वर की आज्ञाओं के पालन का जीवन जीता था तब उनका जीवन परमेश्वर के स्वभाव के स्वरूप होता था। अतः चलने का अर्थ है अपने विश्वास को जीवन से प्रकट करना। अतः हमें आत्मा के अनुसार चलना है यही हमारा जीवन है। यह एक आज्ञा है। हम इस तथ्य को अनदेखा नहीं कर सकते कि आत्मा के अनुसार

चलने में हमारी अपनी इच्छा विहित है। हमारे प्रत्येक चुनाव में हम या तो आत्मा के अनुसार चलेंगे या शरीर की लालसा पूरी करेंगे।

आत्मा की इच्छा अपने जीवन में पूरी करने को हम दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि हम मसीह की आज्ञाओं का निरन्तर पालन करते हैं। यह विचार आपके मन में दो में से एक बात के लिए आपको बाध्य करेगा। एक, हम रुढ़ीवादी हो जाएंगे। हम कहेंगे, "हमें एक सूची बनाना है जिसमें मसीह की सब आज्ञाएं हों कि हम उन्हें पूरा करें।" परन्तु इससे हम उस मार्ग पर होंगे जहां हम होना नहीं चाहते। या दूसरी बात यह होगी कि हमें असफलता का बोध होगा और हम कहेंगे, "ओह, ये तो बहुत अधिक है।" मत्ती अध्याय 5 में पर्वतीय उपदेश को पढ़कर आपके मन में विचार उठेगा, "हम मसीह की आज्ञाओं को कैसे पूरा कर पाएंगे?" अतः प्रयास करके करना भी क्या है?

परन्तु हमें इन दोनों में से एक भी विकल्प को नहीं करना है। हमें यह समझना है कि मसीह की आज्ञाएं शरीर की लालसा के विपरीत हैं और मसीह की आज्ञाओं का विरोधी हमारी शारीरिक लालसाएं हैं। पद 17 में देखिए क्या लिखा है, "क्योंकि शरीर आत्मा के विरोध में और आत्मा शरीर के विरोध में लालसा करता है।" यहां ध्यान दीजिए कि शारीरिक लालसा का अर्थ शारीरिक पाप से नहीं अपितु पापी स्वभाव से है। निःसन्देह पौलुस पद 19 में शारीरिक लालसाओं की सूची देता है और सबसे पहली बात जो वह कहता है वह है, व्यभिचार–देहिक पाप। परन्तु इस सूची में मन संबन्धित पाप भी व्यक्त हैं– डाह, बैर, झगड़ा, ईर्ष्या, क्रोध आदि। ये शारीरिक पाप नहीं हैं। वे मन में वास करते हैं जिसका प्रकटीकरण देह से है। पद 17 में हमें देखने की आवश्यकता है कि शरीर आत्मा के विरोध में लालसा करता है, मसीह की आज्ञाओं का विरोध करता है। यह संघर्ष हम सब के जीवन में होता है।

मसीह के अनुयायियों में एक भी नहीं जिसके मन में यह संघर्ष न चल रहा हो। हम सब पर यह लालच और प्रलोभन आता है। मसीह का अनुयायी इसका अनुभव करता है और इस संघर्ष को समझता है परन्तु यदि हमारे जीवन में यह संघर्ष न हो तो यह अत्यधिक अन्र्थकारी है। ऐसे मनुष्यों से मेरा सामना हुआ है जो कहते हैं, "मैं अपने जीवन से सन्तुष्ट हूं। मुझे इस पाप में रहना भाता है।" या "मैं बाइबल से सहमत नहीं हू। इस बात में बाइबल की बात सही नहीं है।" और उनका जीवन चल रहा है। उसमें संघर्ष है ही नहीं।

संघर्ष रहित जीवन से मन की दशा प्रकट होती है। रोमियों की पत्री अध्याय 8 पद 7 में व्यक्त है, "शरीर पर मन लगाना तो परमेश्वर से बैर रखना है, क्योंकि न तो परमेश्वर की व्यवस्था के अधीन है और न हो सकता है।" देखिए, आत्मा से रहित हम संघर्ष भी नहीं करना चाहते हैं। अतः पद 17 में पौलुस पापी स्वभाव (शारीरिक लालसाएं) और आत्मा की चर्चा करता है कि वे परस्पर विरोधी हैं और आप जो चाहते हैं वह कर नहीं पाते। अब इसका अर्थ क्या यह है, शारीरिक लालसाएं आत्मा को काम नहीं करने देती या आत्मा शारीरिक लालसाओं को क्रियाशील नहीं होने देता है? वह स्पष्ट कुछ नहीं कहता है। वह बस यही कहता है कि वे परस्पर विरोधी हैं और आप जो चाहते हैं वह कर नहीं पाते हैं। पद 17 में यदि आप देखें तो यह संघर्ष स्पष्ट व्यक्त नहीं है।

परन्तु यदि आप पद 16 देखें और 17 तक पढ़ें तो वह संघर्ष मात्र ही नहीं, विजय का परिदृश्य है। "आत्मा के अनुसार चलो तो तुम शरीर की लालसा किसी रीति से पूरी न करोगे।" संघर्ष में शरीर विजयी नहीं होगा। यहां, मेरे विचार में, पौलुस यह मानकर चल रहा है कि गलातिया प्रदेश के विश्वासियों ने सुसमाचार सुना और मसीह को ग्रहण किया तथा आत्मा पाया और वे आत्मा के अनुसार चलना चाहते थे परन्तु उनकी शारीरिक लालसाएं बाधा उत्पन्न कर रही थीं। अतः जो करना चाहते थे कर नहीं पा रहे थे।

अब आती दूसरी बात जो अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है—मसीह की आज्ञाओं को मानना हमारे सामर्थ्य से परे है। यूहन्ना अध्याय 14 पद 15 देखें जहां यीशु कहता है, "यदि तुम मुझसे प्रेम रखते हो, तो मेरी आज्ञाओं को मानोगे।" स्पष्ट है। यदि आप यीशु से प्रेम रखते हैं तो उसकी आज्ञा मानेंगे। परन्तु मैं चाहता हूं आप पद 16 पर ध्यान दें, "मैं पिता से विनती करुंगा, और वह तुम्हें एक और सहायक देगा कि वह सर्वदा तुम्हारे साथ रहे।" और पद 17 में वह उस सहायक का नाम प्रकट करता है, "सत्य का आत्मा।"

ऐसा प्रतीत होता है कि यीशु हमारे भीतर के इस संघर्ष को जानता है— वह हमारा सृजनहार है। अतः वह जानता है कि पापी स्वभाव की बाधा से रहित आत्मा का जीवन जीना असंभव है। हम सब में यह संघर्ष है परन्तु परमेश्वर की स्तुति हो कि हमारे पास यह सहायक है। आत्मा की सहायता से मसीह की आज्ञाओं को आनन्दपूर्वक पूरा किया जाता है।

क्या आपने कभी अनुभव किया है कि हम अपनी शारीरिक लालसा के वशीभूत कैसे हो जाते हैं? मैं जानता हूं। ऐसा प्रतीत होता है कि ऐसा नहीं होगा। अति सत्य है कि आप उस पाप से घृणा करते हैं परन्तु फिर भी आप पाप में गिर जाते हैं। उदाहरण के लिए भोजन को ही ले लीजिए। कुछ ऐसी भोजन वस्तुएं हैं

जिन्हें हम खाना नहीं चाहते वरन् घृणा करते हैं चाहे हमें कितनी भी भूख लगी हो। हमारे मन की इच्छा ही नहीं है कि हम उसे खाएं परन्तु किसी कारणवश हम उसे खा ही लेते हैं।

यही सिद्धान्त हमारे जीवन संघर्षों में प्रासंगिक है। यदि हम पाप और लालसाओं से घृणा करते हैं और संघर्ष कर रहे हैं कि उनके पीछे नहीं जाएंगे अपितु आत्मा की इच्छा पूरी करेंगे।

यहेजकेल अध्याय 36 में मैं आपको इस संदर्भ में कुछ दिखाना चाहता हूं। पद 26 में वह कहता है, "मैं तुम को नया मन दूंगा, और तुम्हारे भीतर नई आत्मा उत्पन्न करुंगा, और तुम्हारी देह में से पत्थर का हृदय निकाल कर तुम को मांस का हृदय दूंगा।" इस पद से हमें समझ में आता है कि परमेश्वर हमारे मन में कैसा काम करता है। अब यहां मांस फिर से हमें समझने में वही बात लाता है देहिक पाप–व्यभिचार, पापी कार्य आदि। यहां मांस का अर्थ यह नहीं है। यहां कहने का अर्थ यह है कि परिवर्तनशील कोमलता। पत्थर से अर्थ है कठोर और विद्रोही जो अधीनता स्वीकार न करे। अब पद 27 में देखें, "मैं अपना आत्मा तुम्हारे भीतर देकर ऐसा करुंगा कि तुम मेरी विधियों पर चलोगे और मेरे नियमों को मानकर उनके अनुसार करोगे।" यह ध्यान देने योग्य गंभीर बात है, "तुम मेरी विधियों पर चलोगे और मेरे नियमों को मानकर उनके अनुसार करोगे।"

अतः आत्मा हमें आत्मा के जीवन योग्य सामर्थ्य प्रदान करता है। वह हम में जो इच्छा उत्पन्न करता है वह अति प्रबल होती है और आप आनन्दपूर्वक मसीह की आज्ञाओं का पालन करते हैं। आत्मा हम में अति प्रबल इच्छा उत्पन्न करती है कि मसीह का आज्ञापालन करें। यह आत्मा का जीवन है।

दूसरा परिदृश्य– आत्मा का जीवन आत्मा की अगुआई का जीवन है। पद 18 में यही व्यक्त है। यह अति प्रभावी पद है, "यदि तुम आत्मा के चलाए चलते हो तो व्यवस्था के अधीन न रहे।" हमने मसीह के अनुसरण के बारे में बहुत चर्चा की है जो शिष्य निर्माण में मुख्य बात है परन्तु यहां पौलुस अनुसरण के विषय कुछ नहीं कह रहा है। वह कहता है, "यदि तुम आत्मा के चलाए चलते हो..." आत्मा के अनुसरण में नहीं। यह उद्देश्य यह है कि आत्मा की पहल पर प्रकाश डाला जाए। यहां आत्मा सामर्थ्यदाता है।

यहां ध्यान देने योग्य बात यह है कि आत्मा लेकर चलता है क्योंकि अपने सामर्थ्य में हम आत्मा का अनुसरण नहीं कर सकते हैं। हम आत्मा के सामर्थ्य द्वारा चलाए जाते हैं। एक प्रचारक ने इसकी तुलना रेलगाड़ी से की थी। इंजन अनेक डब्बों को लिए चला जाता है। परिदृश्य वास्तव में यही है। आत्मा हमें

खींचकर लिए जा रहा है। अब यहां आप यह न कहें कि यह हमारी इच्छा के विरुद्ध बल प्रयोग है। नहीं, आपको स्मरण रखना है कि इस प्रक्रिया में हमारी इच्छा विहित है। हमें आत्मा से जुड़ने की इच्छा रखना है। आत्मा हम में यह इच्छा उत्पन्न करता है।

रोमियों की कलीसिया को पौलुस ने लिखा कि परमेश्वर के आत्मा के मार्गदर्शन में चलनेवाले परमेश्वर की सन्तान हैं। देखिए रोमि. 8:14, परमेश्वर की सन्तान अधीरता से आत्मा के पीछे चलते हैं। यदि हम मसीह में लेपालक सन्तान हैं तो आत्मा द्वारा चलाए जाने से अति प्रसन्न होते हैं। हम उसके साथ जुड़े रहना चाहते हैं।

पद 18 का उत्तरार्ध कभी–कभी समस्या उत्पन्न करता है, "तुम आत्मा के चलाए चलते हो तो व्यवस्था के अधीन न रहे।" आत्मा के मार्गदर्शन में रहनेवाले परमेश्वर की सन्तान हैं और परमेश्वर की सन्तान व्यवस्था के अधीन नहीं है। आप यहां आत्मा का संबन्ध देख रहे हैं न?

पौलुस का उद्देश्य यह है कि हम अपने आप को व्यवस्था से मुक्त और आत्मा के सामर्थ्य में देख पाएं। परमेश्वर की सन्तान आत्मा के चलाए चलती है और व्यवस्था के अधीन नहीं है इसलिए हमारा धर्मी ठहराया जाना व्यवस्था से नहीं है।

आपको स्मरण होगा कि मैं ने आरंभ में एक प्रश्न पूछा था, "क्या पौलुस पड़ोसी से प्रेम के संबन्ध में नियम निर्धारण कर रहा है?" नहीं, पौलुस कभी नहीं भूलता कि हमारी धार्मिकता मसीह में है। यदि वह विश्वासियों को परस्पर प्रेम करने का आदेश देता है तो वह आत्मा के चलाए चलना है। हम व्यवस्था के अधीन नहीं हैं। मसीह हमारी धार्मिकता है। हम नियमों पर आधारित नही हैं। केवल मसीह ही हमारी धार्मिकता है।

रोमियों 8:3–4 में पौलुस लिखता है, "अपने ही पुत्र को पापमय शरीर की समानता में और पापबलि होने के लिए भेजकर, शरीर में पाप पर दण्ड की आज्ञा दी। इसलिए कि व्यवस्था की विधि हम में जो शरीर के अनुसार नहीं वरन् आत्मा के अनुसार चलते हैं, पूरी की जाए।" अतः हमारा जीवन कैसा है? हम आत्मा के चलाए चलते हैं। परमेश्वर की सन्तान व्यवस्था के अनुसार नहीं है क्योंकि हमें आत्मा जीवन देता है। परमेश्वर की सन्तान आत्मा द्वारा जीवन पाते हैं।

ऐसा प्रतीत होता है कि मैं बहुत अधिक कह रहा हूं। एक ही बात को बार–बार कह रहा हूं। हम आत्मा का जीवन व्यतीत करते हैं क्योंकि आत्मा ही हमारा जीवन है। हम परमेश्वर की सन्तान हैं और व्यवस्था के अधीन नहीं हैं क्योंकि आत्मा हमारा जीवनदाता है।

पौलुस भी तो बार–बार यही कह रहा है। वह हमें एक ही सत्य के विभिन्न परिप्रेक्ष्य दिखा रहा है। आत्मा के जीवन का अर्थ क्या है? मेरा मन कठोर है और मुझे कभी–कभी परमेश्वर की प्रतिज्ञाओं पर भरोसा करने में कठिनाई होती है। अतः मुझे विभिन्न परिप्रेक्ष्यों में यह सत्य सुनना ही होगा।

यह वाक्यांश, "व्यवस्था के अधीन नहीं" का अर्थ यह नहीं कि हमें व्यवस्था को नहीं मानना है। मैं एक उदाहरण देता हूं जब पहाड़ों को पार करके एक क्षेत्र किसी दूसरे क्षेत्र से जोड़ा जाता है तब उसमें काम करनेवाले कर्मी दास नहीं होते हैं यद्यपि उनका परिश्रमिक बहुत कम होता है। उन्हें पहाड़ों में कठोर परिश्रम करना होता है। कुछ की तो जान भी चली जाती है–दुर्घटना, गर्मी आदि से। उनके हाथ पैर भी टूट जाते हैं। उनके लिए यह एक घृणित कार्य होता है। वे देखते हैं कि कितना काम हो गया और कितना शेष है तो वे काम के उस बोझ से घृणा करने लगते हैं। परन्तु जब वह कार्य पूरा हो जाता है तब उसे एक महान तकनीकि या प्रौद्योगिकी उपलब्धि माना जाता है। यात्री उसका आनन्द लेते हैं। इसी प्रकार व्यवस्था है।

व्यवस्था पूरी होने से पूर्व एक बोझ थी। उसे पूरा करने में जान चली जाती थी परन्तु मसीह ने उसे पूरा किया, उसकी धार्मिकता की अनिवार्यता को पूरा किया जिससे कि हम उसके पालन का आनन्द ले रहे हैं। जब हम से यीशु कहता है, "यदि तुम मुझ से प्रेम रखते हो तो मेरी आज्ञाओं को मानोगे।" याह की स्तुति करो! हम यीशु से प्रेम करते हैं। हम उसकी आज्ञाओं को मानने के लिए उत्सुक हैं। यह हमारे लिए रोमांचकारी है परन्तु हम उसे कैसे मानेंगे।

यदि हम में अन्तर्वासी आत्मा मसीह की आज्ञाओं के पालन की इच्छा करता है और हम भी यही कामना करते हैं तो यह आत्मा की अगुआई का जीवन है।

तीसरा परिप्रेक्ष्य– आत्मा के प्रमाण का जीवन। अधिकांश विश्वासी इससे परिचित हैं। पद 22–23 पर ध्यान दें, "आत्मा का फल प्रेम, आनन्द, शान्ति, धीरज, कृपा, भलाई, विश्वास, नम्रता और संयम है। ऐसे ऐसे कामों के विरोध में कोई भी व्यवस्था नहीं।"

हमारे पास सबके विस्तार में जाने का समय नहीं है परन्तु मैं एक फल पर ध्यान केन्द्रित करुंगा –"आनन्द" सब गुण इसी से संबन्धित हैं परन्तु आनन्द वास्तव में परमेश्वर पर भरोसा रखने से संबन्धित है। यदि हमारा विश्वास यह है कि परमेश्वर भला है, वह अपरिवर्तनीय है, वह अटल एवं स्थायी है, वह हमसे प्रेम करता है और वह हमारी भलाई के लिए काम करता है तब कठिन परिस्थितियों में हम डांवांडोल नहीं होते हैं क्योंकि हमारी भावनाएं परिस्थितियों से संयोजित नहीं हैं। हमारी भावनाएं वरन् संपूर्ण जीवन परमेश्वर पर आधारित है। यदि परमेश्वर निश्चल एवं अटल है तो हम भी निश्चल एवं अटल रहते हैं। यही कारण है कि परीक्षाओं के समय आनन्द हमारे जीवन में जोश भर देता है। हम आश्चर्य करते हैं कि परमेश्वर क्या करना चाहता है? हो क्या रहा है? मैं जानता हूं कि परमेश्वर भला है परन्तु यह तो अच्छा नहीं हो रहा है। सत्य तो यह है कि परमेश्वर भला है और वह मेरी भलाई के लिए इसमें कार्यरत है।

भजन 73 मेरा मनभावन भजन है। उसमें आसाप, इस्राएल का आराधना अगुआ परमेश्वर से शिकायत करता है, "हे परमेश्वर, दुष्ट क्यों फलता है? अधर्मी का कुशल होता है और मैं तथा ग़रीब, हमें कुछ प्राप्त नहीं होता है।" आसाप में न्याय की मानसिकता जाग उठती है, "मुझे फल नहीं मिलता। मैं दुःखी हूं।" उसका विश्वास डगमगाने लगा।

तब कुछ अद्भुत होता है। वह पवित्रस्थान में प्रवेश करता है और परमेश्वर की उपस्थिति में उसे बोध होता है कि परमेश्वर ही सब कुछ है। वह कहता है, "तेरे संग रहते हुए मैं पृथ्वी पर और कुछ नहीं चाहता।" यह आनन्द का सार है। केवल परमेश्वर और कुछ नहीं। और कछ नहीं चाहता।

फलों की सूची देखकर हमारा पापी स्वभाव कहेगा कि हम इसे स्वयं कर सकते हैं। हम आत्मा में विश्वास नहीं करेंगे। हम उसके सामर्थ्य के लिए याचना नहीं करेंगे कि हम में ये फल प्रकट हो। हम बुराई त्याग कर भलाई करने लगेंगे। पौलुस के कहने का अर्थ यह कदापि नहीं है। वह आचरण में सुधार का आदेश नहीं देता है।

आत्मा का फल प्रदर्शन की आज्ञा नहीं देता है।

हमारे लिए भला और बुरा जानना अच्छा है, जैसा मैं ने पहले कहा है परन्तु यदि हम सावधान न रहें तो हम परमेश्वर के वचन द्वारा अपने पाप के स्वभाव को व्यक्त करने लगेंगे। हम भलाई के लिए सराहना चाहते हैं। हम भलाई के फल को प्रकट करके प्रशंसा पाने की प्रतीक्षा करेंगे। भला एवं दयालु होने के लिए क्या

आपको मुझ पर गर्व नहीं? हम परमेश्वर की भली बात को विकृत कर देते हैं कि उचित को समझें। हम अपने पापी स्वभाव पर जय पाना चाहते हैं।

हम स्वयं को धर्मी ठहराने लगते हैं। हम अपनी दयालुता और भलाई पर ध्यान देते हैं। पौलुस के कहने का उद्देश्य यह नहीं है। पौलुस चाहता है कि हम नई सृष्टि हों जो मन से कार्य करें जो अधिकाधिक मसीह की समानता को समझे वरन् वैसे ही हो जाएं। हम विकास करते प्रतीत होंगे परन्तु बदलेंगे नहीं। क्या आपने 50 फुट का शाहबलूत देखा है? मेल लॉरेन्ज़ ने अपनी पुस्तक, "द डाइनामिक्स ऑफ स्पीरिचुअल फोरमेशन" में यही प्रश्न पूछा है, "हम 50 फुट के शाहबलूत क्यों नहीं देखते हैं?" एक गिलहरी उसे ले जाकर मिट्टी में दबा देती है और वह उग जाता है परन्तु वह 50 फुट का वृक्ष नहीं बनता जैसा वह जंगल में होता है। यह शाहबलूत बांज वृक्ष बन जाता है। वह कुछ और बन जाता है। यही रूपान्तरण है, परिवर्तन है। हम अधिक अच्छे, अधिक बलवन्त, अधिक बुद्धिमान नहीं बन रहे हैं। हम एक संपूर्णरूपेण नई सृष्टि हैं। हम मसीह के स्वरूप में बदल रहे हैं। यह आत्मा का कार्य है।

दूसरी बात, हम मसीह के गुण प्रदर्शित करते हैं। हम देखते हैं कि आत्मा का फल व्यवस्था पूरी करता है। यहां यह एक प्रकट विषमता है। हम इसे पहले भी देख चुके हैं। शारीरिक लालसाओं और आत्मा के फल में विरोध है– प्रभावी विरोध है। परन्तु पद 13 –14 में हम यह देखते हैं, "हे भाइयों तुम स्वतंत्र होने के लिए बुलाए गए हो, परन्तु ऐसा न हो कि यह स्वतंत्रता शारीरिक कामों के लिए अवसर बने।" किस काम का अवसर? शारीरिक काम का। अब हम जानते हैं कि शारीरिक काम क्या हैं। पौलुस हमें इनकी सूची दे चुका है। (19–21) पौलुस कहता है कि अपनी स्वतंत्रता का दुरुपयोग करके इन कामों में न पड़ो। इसकी अपेक्षा, "प्रेम से एक दूसरे के दास बनो।"

हमने देखा है कि आत्मा का एक फल प्रेम है। प्रेम के विषय पौलुस पद 14 में कहता है, "व्यवस्था इस एक ही बात में पूरी हो जाती है, 'तू अपने पड़ोसी से अपने समान प्रेम रख।'" आप देख रहे हैं? पौलुस कहता है, 'यह असंभव काम करो। इसमें आत्मा की अगुआई स्वीकार करो। परमेश्वर के आत्मा पर भरोसा रखो कि वह आप में यह फल उत्पन्न करे।'

अन्त में, आत्मा का फल मसीह के साथ एकता की उद्घोषणा है। यह एक रोचक शब्द है। यूनानी भाषा के नये नियम में यह शब्द एक वचन है। अर्थात हम इन्हें परस्पर विलग नहीं कर सकते कि कहें, "मैं एक गुण में अच्छा हूं परन्तु दूसरे में नहीं। मैं सब कुछ कर सकता हूं परन्तु प्रेम नहीं कर सकता हूं। यह बहुत

कठिन है।" ये सब गुण एक हैं। यदि हम मसीह के अनुयायी हैं तो उसके साथ हमारी एकता का प्रमाण इन गुणों का प्रदर्शन है। आत्मा के फल का प्रदर्शन!

अब हम आत्मनिर्भर होकर कह सकते हैं, "मेरे जीवन में सज्जनता का फल है।" चाहे यह सज्जनता मेरे पापी स्वभाव से उत्पन्न हो। आप मय के कारण सज्जनता का प्रदर्शन कर सकते हैं। यह आत्मनिर्भरता है। आत्मा पर निर्भरता नहीं।

विश्वासयोग्यता के विषय क्या कहें? आपमें दृढ़ एवं अविभाज्य कार्य नीति हो। मनुष्य आपको देखकर दांतों तले उंगली दबाएं और कहें, "वह कैसा विश्वासयोग्य व्यक्ति है!" जबकि यह आपका अहंकार और उग्र स्वभाव है जो आपको अन्यों से अधिक अच्छा दिखाने की खोज में रहता है, प्रशंसा पाने की खोज में रहता है।

याद रखें, आत्मा के फल प्रकट करने में हम आत्मानिर्भर नहीं हो सकते। आत्मा को हम में ये फल उत्पन्न करने हैं।

आत्मा के फल का प्रत्येक परिप्रेक्ष्य, चाहे बहुत छोटा हो, हमारे जीवन में विकसित होना ही है। अन्यथा हम कैसे विश्वास कर पाएंगे कि आत्मा हम में वास करता है। आत्मा का कार्य हमारे मन का परिवर्तन है। यदि हम अपने जीवन से यह फल प्रकट होना नहीं देखते तो हम में आत्मा का अन्तर्वास संदिग्ध है।

रोमियों अध्याय 8 पद 9 में पौलुस कहता है– जैसा मैं ने कहा है कि रोमियों अध्याय 8 में आत्मा के विषय पर अधिक विस्तार से चर्चा की गई है–"जबकि परमेश्वर का आत्मा तुम में बसता है, तो तुम शारीरिक दशा में नहीं परन्तु आत्मिक दशा में हो। यदि किसी में मसीह का आत्मा नहीं तो वह उसका जन नहीं।"

यीशु ने इसी बात को दूसरे शब्दों मे कहा कि पेड़ अपने फलों से पहचाना जाता है। मैं ने मनुष्यों को प्रायः आत्मा के फल और कार्यों (या पापी स्वभाव के काम) में अन्तर दर्शाते सुना है। उनका कहना है कि कार्य में प्रयास आवश्यक है जबकि आत्मा के फल में प्रयास की आवश्यकता नहीं है। मैं इस विचार से सहमत नहीं हूं क्योंकि यीशु ने स्पष्ट कहा है कि पेड़ अपने फल से जाना जाता है जिसमें प्रयास की आवश्यकता नहीं है। देह के काम या पाप का स्वभाव पाप के दास के लिए प्रयासरहित होते हैं और आत्मा के फल में जीनेवाले के लिए भी प्रयास की आवश्यकता नहीं। दोनों अवस्थाओं में प्रयास करने की आवश्यकता नहीं है।

अच्छे पेड़ के फल अच्छे होंगे और बुरे पेड़ के फल बुरे होंगे। मसीह की एकता में रहने पर अच्छे फल ही उत्पन्न होंगे।

संघर्ष अभी समाप्त नहीं हुआ है। पौलुस हमें सिद्धता के लिए नहीं बुलाता है। परन्तु अच्छा फल हमारे जीवन पर प्रभुता करे। आत्मा से रहित फल बुरा होगा और अन्ततः दण्ड पाएगा। गलातियों अध्याय 5 पद 21 में वह यही कहता है, "इसके विषय में मैं तुम से पहले से कह देता हूं जैसा पहले कह भी चुका हूं, कि ऐसे काम करनेवाले परमेश्वर के राज्य के वारिस न होंगे।" बुरा वृक्ष बिना प्रयास ही बुरा फल लाता है। इसका संदर्भ मनुष्य की जीवनशैली से है।

पौलुस ने ये तीन परिप्रेक्ष्य तो प्रस्तुत किए हैं परन्तु हमें विमूढ़ नहीं छोड़ा है कि कैसे करें। उसने हमें समझाया है कि यह क्या है और साथ ही बताया है कि इसे कैसे करें। अतः आत्मा के जीवन के दो उपाय हैं। हम शीघ्रता से इन्हें देखेंगे–आत्मा के जीवन का अर्थ क्या है।

पहला, पापी स्वभाव पर विजय। पद 24 देखें, "जो मसीह यीशु के हैं उन्होंने शरीर को उसकी लालसाओं और अभिलाषाओं समेत क्रूस पर चढ़ा दिया है।"

क्रूस पर चढ़ा दिया। आज त्याग का पर्याय शब्द बन गया है। हम किसी को धुतकार देते हैं तो कहते हैं, उसे क्रूस पर चढ़ा दिया। परन्तु यीशु को क्रूस पर चढ़ाने का अर्थ था नृशंस हत्या।
क्रूसीकरण एक अति भयानक मृत्यु थी। प्रथम शताब्दी के पाठक इसका वास्तविक अर्थ समझते थे। यह एक अत्यधिक दर्दनाक मृत्यु थी।

अब आप कहेंगे, "यदि हम देह की लालसाओं को क्रूस पर चढ़ा दें तो संघर्ष होगा ही नहीं।" अतः पद 17 के अनुसार विरोध का विषय उठता ही नहीं है।

स्मरण करें कि पद 16 में वह बार–बार विजय के बारे में कहता है, "आत्मा के अनुसार चलो तो तुम शरीर को लालसा किसी रीति से पूरी न करोगे।" संघर्ष तो होगा परन्तु विजेता आत्मा ही है। हमारे जीवन पर आत्मा की प्रभुता है तो पापी स्वभाव को स्थान नहीं मिलेगा। परन्तु पापी स्वभाव सुरक्षित है। आप समझ रहे हैं न? यदि आप मसीह में है तो आपको अनुभव होगा कि कुछ भावनाओं के वश में करना कैसा कठिन है।

कुछ अभ्यास जिनसे आप छुटकारा नहीं पा सकते! वे नियन्त्रण से बाहर होते हैं, इसी कारण वह पद 24 में कहता है, "जो मसीह यीशु के हैं उन्होंने शरीर को उसकी लालसाओं और अभिलाषाओं समेत क्रूस पर चढ़ा दिया है।" आत्मा में जीवन जीने और उसका सामर्थ्य खोजने पर इन लालसाओं का हमारे जीवन पर नियन्त्रण नहीं रह जाता है। उन पर हमें विजय मिल जाती है।

मैं आपको यहां दो बातें बताना चाहता हूं। अपने मन का ध्यान केन्द्र पहचानें। स्वयं से पूछें, "आपका पापी स्वभाव आपके जीवन के केन्द्र में किस बात को रखता है और उसे अत्यधिक महत्त्वपूर्ण कहता है।" आपकी उत्कट अभिलाषा की पूर्ति में ही आपका प्रयास रहेगा कि आपको संतोष प्राप्त हो। परन्तु यदि आत्मा आपकी अगुआई करता है। यदि आप आत्मा के चलाए चलते हैं तो वह उसकी इच्छा पूर्ती की लालसा आप में जगा देता है। आत्मा विश्वास के जीवन को क्रियाशील बना देता है। गलातियों 5:5 में हमने यही देखा है, पहले भी और अब भी। "आत्मा के कारण हम विश्वास से, आशा की हुई धार्मिकता की बाट जोहते हैं।" आत्मा विश्वास के जीवन को क्रियाशील बनाता है। आरंभ से अन्त तक हमारे मन में आत्मा ही काम करता है– नया जन्म प्रदान करने का काम और फिर शोधन का काम हमें परमेश्वर की अपेक्षा अन्य सब बातों को अपने मन में प्रवेश करने से रोकना है।

हमें आसाप के सदृश्य कहना है, "हे परमेश्वर, इस पृथ्वी पर मेरा केवल तू ही है जिसमें मैं सन्तुष्टि पाता हूं।" हम अपने पहले साक्षातकार में मसीह पर न तो ध्यान केन्द्रित कर सकते हैं और न ही यह कह सकते हैं कि हम परमेश्वर के समक्ष धर्मी हैं और परमेश्वर ने हमारा उद्धार किया है। हम उसके पोषक अनुग्रह को– मसीह के अनुग्रह को अपने जीवन में समझना है–उस साक्षातकार के पल से सदा के लिए।
गलातियों अध्याय 5 पद 25 में पौलुस यही कहता है, "यदि हम आत्मा के अनुसार जीवित हैं, तो आत्मा के अनुसार चलें भी।" यहां "जीवित" शब्द का अर्थ भिन्न है। इसका अर्थ है जीवन पाना क्योंकि हम आत्मा से जीवन पाते हैं जो आत्मा का मूल कार्य है– आत्मा का नवजीवनदायक कार्य। हम आत्मा के अनुसार चलें भी। ध्यान दें कि पौलुस बार–बार यही कह रहा है कि हम आत्मा के अनुसार चलें।

हमारे पापी स्वभाव पर जयवन्त होने में यह मुख्य बात है। यह मसीह का होना कहलाता है। यदि हम मसीह के हैं तो पापी स्वभाव की प्रभुता हम पर नहीं रही। पद 24 के अनुसार वह स्वभाव क्रूस पर चढ़ाया जा चुका है। आपने क्या ध्यान दिया कि यह पहली बार कहा गया है? जो मसीह में है उन्होंने शरीर को अभिलाषाओं और लालसाओं समेत क्रूस पर चढ़ा दिया है। यह किसी के होने का विचार होता है कि कहे, "मसीह के हैं।" यह वाचा की भाषा है।

निर्गमन अध्याय 6 में परमेश्वर ने इस्राएल के लिए कहा, "मैं उनका परमेश्वर ठहरुंगा।" और लैव्यव्यवस्था में वह कहता है, "मैं तुम्हारा परमेश्वर बना रहूंगा और तुम मेरी प्रजा बने रहोगे।" यह परस्पर एक दूसरे का होना है। हम परमेश्वर के हैं और परमेश्वर हमारा है। यदि आप मसीह के हैं तो आत्मा शर्तरहित आपके लिए समर्पित है कि आपका शोधन करे और आपको बदल दे। हमें मसीह के साथ अपनी पहचान बनाना है और यह निश्चित करना है कि हम उसके हैं या नहीं।

विकासमान होनाः मैं एकलौता पुत्र था। मेरे माता–पिता दोनों काम करते थे अतः मैं टी.वी. देखने का आदि हो गया। आप में से अनेकों का यह अनुभव होगा। ऐसे में आप चेनल बदल कर अपनी इच्छा का चेनल खोजते हैं। इस प्रक्रिया में अनेक छवियां आपके सामने से निकलती हैं जिनमें से अनेक को देखना आप जानते हैं कि आपके लिए उचित नहीं परन्तु उसका खिंचाव आप को बान्धता है– आपको प्रलोभित करता है–"यह देखनेयोग्य है, इसे लगा।"

अब मेरे चुनाव का प्रश्न आता है। आप सोचते हैं, "बच्चे या पत्नी कभी भी आ जाएंगे और मैं पकड़ा जाऊंगा। वे मेरे बारे में गलत सोचेंगे।" और आप उसे अनदेखा करते हैं। यह अच्छा है परन्तु आत्मा के अनुसार नहीं है। या आप सोचते हैं कि यह देख कर मुझे आत्मग्लानी होगी। मुझे अपने समूह में यह कहकर पश्चाताप करना होगा। यह तो बहुत बुरा होगा। यह आपकी प्रेरणा है आत्मा की चाल नहीं है।

आप संभवतः परमेश्वर के वचन की सहायता लेकर कहेंगे कि यह उस सूची में है जो पौलुस देता है अतः मैं ऐसा नहीं करुंगा। यह फिर प्रेरणा की बात है यह वचन के अनुसार जीवन है। अतः अच्छा है परन्तु यह भी आत्मा के अनुसार नहीं है। या ऐसा खिचाव के समय, ऐसी लालसा के समय हम कहें, "नहीं, मैं मसीह का हूं। यह मेरा जीवन नहीं। मैं ने अपनी देह को लालसाओं समेत क्रूस पर चढ़ा दिया है। अब मैं केवल मसीह का हूं।"

यिर्मयाह अध्याय 31 पर विचार करें जहां भविष्यद्वक्ता नई वाचा का उल्लेख करता है। ध्यान दें यहां फिर से भाषा में किसी के होने का बोध है, "मैं अपनी व्यवस्था उनके मन में समवाऊंगा, और उनके हृदय पर लिखूंगा और मैं उनका परमेश्वर ठहरुंगा और वे मेरी प्रजा ठहरेंगे।" यह परमेश्वर के होने और मसीह के होने का परिदृश्य है। आत्मा के अनुसार जीवन, वचन के अनुसार जीवन। ऐसा जीवन जीना जैसे आप मसीह के हैं और मसीह आपका है। आत्मा के चलाए चलो। पापी स्वभाव से युद्ध में विजय पाने का यही एक मार्ग है।